International Journal For Advanced Research In Science & Technology
A peer reviewed international journal
www.ijarst.in
ISSN: 2457-0362

गिरिराज किशोर की कहानियों में दलित चेतना

प्रा. डॉ. ए. बी. नागरगोजे,
एच. पी. टी. आर. वाय. के. कॉलेज,
नाशिक-४२२००५

"दलित चेतना मूलतः वर्ण व्यवस्था के तहत जारी प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष उमन के प्रतिरोध और प्रतिकार की चेतना है।" प्रतिरोध का आशय है उस यथास्थितिवादी व्यवस्था को आदर्श मानने से इनकार करना है, जो सामाजिक, सांस्कृतियों और आर्थिक स्तर पर भेद-भाव करता है। प्रतिकार का आशय है सदियों से सामाजिक अपमान और उत्पीड़न को अपनी नियति मानने से इनकार करना है। अतः दलित चेतना जातिवादी व्यवस्था के दंश से उपजा प्रश्न है, जो साहित्य के स्तर पर अंधश्रद्धा ग्रंथ प्रामणिकता, शब्द प्रमाणिकता, आत्मा, ईश्वर और उस आधारित नैतिकता और धर्मसत्ता को अस्वीकार करता है।

"दलित चेतना एक मूल्य है, एक आंदोलन है।" दलित चेतना मराठी साहित्य से उत्पन्न होकर हिंदी साहित्य में अपनी पहचान बना चुकी है। दलित चेतनात्मक मूल्य, आक्रोश, चीख, वेदना, पीड़ा, चुभन, घुटन, छटपटाहट और शोपण के दर्द को उकेरकर प्रस्तुत करना दलित चेतना है। भारतीय जाति व्यवस्था की कोख व अस्पर्शता की वेदना से दलित चेतना की उत्पत्ति हुई है। दलित चेतना सदियों से सताये हुए लोगों की अभिव्यक्ति है। दलित चेतन मात्र मूक अभिव्यक्ति नहीं है, उसमें अस्वीकार, निषेध, विद्रोह और संघर्ष की आग भी है। भारत में दलितों के साथ अमानवीय व्यवहार हुआ है, उसकी प्रताड़ना की गयी है। भारत में दलितों के साथ अमानवीय व्यवहार हुआ है. उसकी प्रताड़ना की गयी है। तिरस्कार किया गया है।

IJARST
International Journal For Advanced Research In Science & Technology
A peer reviewed international journal
www.ijarst.in
ISSN: 2457-0362

यह व्यवहार पशुओं के साथ भी नहीं हुआ है। इस सामाजिक अन्याय को देखते हुए दलित चेतना का जागृत होना स्वाभाविक है।

दलित चेतना : साहित्यिक एवं सामाजिक सरोकार

'दलित चेतना' भारतीय वर्ण व्यवस्था व जाति व्यवस्था की कोख से व अस्पृश्यत की दारूण वेदना से उत्पन्न हुई है। दलित चेतना सदियों से सताए हुए लोगों की पीड़ा की अभिव्यक्ति है। इसमें अस्वीकार, निषेध, विद्रोह और संघर्ष के प्रति आस्था निरंतर पनप रही है। भारत में दलितों के साथ अमानवीय व्यवहार किया गया। इस सामाजिक अन्याय के कारण दलित चेतना जागृत हुई है।

अ. दलित चेतना: साहित्यिक सरोकार

'दलित चेतना' के परिणाम स्वरूप ही दलित साहित्य उपजा है। 'अम्बेडकर', 'महात्मा फुले', 'छत्रपति शाहू महाराज', 'कवीर', 'रैदास' व 'महात्मा गौतमबुद्ध' दलित साहित्य के प्रेरणा श्रोत है। इन लोगों ने दलितों को एक वाणी दी है। विशेषकर डॉ वावासाहेव अम्बेडकर ने दलितों को उनकी गुलामी का अहसास कराया है। उन्हें मानव होने की जानकारी दी है, उन्हें शिक्षित व संघर्षशील होने के लिए प्रेरण दी। यह प्रेरणा केवल मौखिक न होकर साहित्यिक रूप में भी थी।

"दलित साहित्य वर्ण व्यवस्था के विरोध का साहित्य है। वर्ण व्यवस्था का विरोध चाहे जो भी करे, ब्राह्मण करे या अन्य कोई भी, वह दलित साहिय का अभिन्न हिस्सा है।"

International Journal For Advanced Research In Science & Technology
A peer reviewed international journal
www.ijarst.in
ISSN: 2457-0362

दलित साहित्य दरअसल मानसिकता बदलने वाला साहित्य है। यह समाज की गलतियों को चित्रित करने का और बदलने का साहित्य है। यह मानव मानव की बराबरी और न्याय की माँग करने वाला, सामाजिक दमन के विरूद्ध तर्क करने वाला, विज्ञान पर आधारित विद्रोह का प्रतिवद्ध साधन है। यह रूढ़ि, विकृत, परम्परा, आडंबर और अंधविश्वास को नष्ट करने वाला साहित्य है। दलित साहित्य का उपयोग मात्र व्यक्ति नहीं समाज को बदलने की प्रक्रिया में किया जा सकता है। चूंकि यह समाज के बहिष्कार, दमन व पीड़ा से उपजा है।

अतः स्पष्ट है कि दलित साहित्य का आधार बाबासाहब अम्बेडकर की मांनवतावादी एवं क्रांतिधर्मी विचारधारा है, जिसके आलोक से दलित साहित्य अपना आकार ग्रहण कर रहा है, दलित साहित्य के संदर्भ ऐतिहासिक एवं प्राचीन है, और यह साहित्य संस्कृति के संघर्ष व मूल्यों के संघर्षों का साहित्य है। जो परम्परा के विरोध में दिखाई देता है। पारंपरिक साहित्य के छल-छद्म और नकारात्मक दृष्टिकोण के प्रति वह निर्मम है। इसीलिए दलित साहित्य में सदियों से दवा आक्रोश आग बनकर बरसता है। भाषा तथा कला की परिणितियाँ उसे सीमावद्ध करने में असमर्थ हो जाती है।

ब. दलित चेनता: सामाजिक सरोकार

'दलित चेतना' का उद्गम सामाजिक संघर्ष और आन्दोलनों में हुआ है। सामाजिक समानता के लिए जव डॉ अम्बेडकर ने पीने के पानी पर बराबर का अधिकार का दावा किया तथा मंदिरों में पूजा-अर्चना में वहिष्कार का विरोर कर मंदिर प्रवेश की बात उठायी तो उन्हें सवर्णों व हिंदुओं के भारी विरोध का समाना करना पड़ा। इस संघर्ष के दौरान डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने इस बात को महसूस किया कि-

"दलित समाज की सबसे बड़ी जरूरत है कि उन्हें उनके खोए हुए स्वाभिमान एवं आत्मसम्मान का एहसास कराना। वे मनुष्य है ये समझाना, वे गुलाम बना दिए गए हैं, इसका अहसास करवाना। इन सब चीजों के लिए जरूरी था, उन्हें शिक्षित करना, संघर्ष में उतारना और संगिठत करना।"

डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने दलित समाज की जरूरत को ध्यान में रखकर दलितों के खोए स्वाभिमान एवं आत्मसम्मान के प्रति जागृति का एहसास कराया। उन्होंने दलित समाज के पढ़े-लिखे लोगों को आंदोलन से जुड़ने व साहित्य लिखने के लिए प्रेरित किया, ताकि आंदोलन को बल मिले। इस प्रकार आंदोलन व साहित्य एक दूसरे के प्रेरक बने। यहीं से दलित चेतना का उदय हुआ। सामान्यतया लोग कबीर, रैदास, नानक के साहित्य को और उनसे पहले भी नाथ और सिद्धों के साहित्य को भी दलित साहित्य से जोड़ते हैं लेकिन व साहित्य धर्म की सीमाओं से कभी भी मुक्त नहीं हुआ। वह साहित्य हिंदु धर्म व ईश्वर के दायरे में घूमता रहा। भले ही जाति के बंधनों को उसने नकारा हो। लेकिन डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने जिस

दलित चेतना और साहित्य की नींव डाली व वैज्ञानिक सोच, तर्कों व सिद्धान्तों के आधार पर थी तथा धर्म, भाग्य, ईश्वर और सारी रूढ़िगत परम्पराओं एवं विकृतियों से मुक्ति की राह खोजती थी। इसीलिए डॉ. भीमराव अम्बेडकर के काल में जो भी सबसे बड़ा तात्कालिक सामाजिक मुद्दा दलितों के सामने आया उन्होंने उसे उठाया चाहे वह पीने के पानी का मुद्दा हो या मंदिर में प्रवेश का। ये सब मुद्दे मनुष्य के अधिकार के साथ-साथ दलित चेतना व स्वाभिमान से जुड़ गए थे। यही साहित्य दलितों को प्रेरणा के साथ-साथ वैचारिक स्तर पर श्रेष्ठता प्रदान करने का स्रोत भी बना और नए समाज का निर्माण करने के लिए साधन भी बना है।

गिरिराज किशोरो की कहानियों में प्रतिपादित दलित जीवन :-

गिरिराज किशोर के कहानी में सामाजिक प्रसंग अति सूक्ष्म रूप में उभरकर आए हैं। समाज के उसी सूक्ष्म रूप में एक भाग है 'दलित जीवन' । गिरिराज किशोर भारतीय समाज के इतिहास से पूरी तरह परिचित हैं। हमारा समाज जिस कठिन समय से गुजर रहा है उसका वाह्य स्वरूप परिचित हैं। हमारा समाज जिस कठिन समय से गुजर रहा है उसका बाह्य स्वरूप वास्तविक नहीं है, क्योंकि अमानवीयता उसका अतंरग स्वभाव बन गया है। वह इसलिए कि हमारी सामाजिक स्थितियाँ पहले की अपेक्षा भीषण व भायनक होती जा रही हैं इसी सत्य को गिरिराज किशोर ने अपनी कहानियों में अभिव्यक्त किया है। दलित जीवन के बारे मे गिरिराज किशोर कहते हैं-

"मैं बराबर सोचता हूँ कि दलित को अपने जीवन से काटकर हमने समाज का वहुत बड़ा नुकसान किया है। सवाल बचपन में मेरे दिमान में रहा है। में देखता था कि हमारे घर में महिलाएँ जव दलितों को खाने के लिए रोटी सब्जी देती थी, तो ऊपर से डालते थे, तो यह बहुत अपमान जनक था। मुझे बुरा लगता था कि उनके हाथ में क्यों नहीं दिया जा सकता। में पूछता था तो उत्तर मिलता था कि पाप लगता है, तब मैं कहता था, किसी को रोटी देते छूने से पाप कैसे लग सकता है और लगेगा भी तो रोटी देने से पाप समाप्त हो जाएगा। "

गिरिराज किशोर एक संवेदनशील रचनाकार है। वे समय व समाज की नब्ज को पहचानने में माहिर है। दलित वर्ग के प्रति दया तो पर्यात मात्रा में उमड़ती दिखाई देती है, परंतु वह उनकी भूख प्यास को मिटाने में असमर्थ है। गिरिराज किशोर की कहानी 'घोड़े का नाम घोड़ा' में छोटा नत्थु जो साईस का काम करता है। वह अपनी तुलना घोड़े से करता है। और अपनी भूख मिटाने घोड़े को दिए जाने वाली रोटी को चुरा कर खाता है। और अपने गम भुलाने के लिए घोड़े के मालिश के लिए लाई गई प्रिंट को पीता है। क्योंकि मालिक उसे दो जून की रोटी भी नहीं देता केवल काम करवाता है, इसलिए वह अपनी मन की बात घोड़े से व्यक्त करता है। साईस की व्यथा घोड़े के माध्यम से ही व्यक्त की गयी है-

"लम्बी थकान भरी यात्रा के बाद जब मुझे मालिक के हुक्म से घी पड़ी रोटी दी जाती तो वह उनमें से दो चारह पार कर देता था। मैं देखकर अनदेखा कर देता था।

उसे नशे का भी शौक था। मालिश के लिए लाई गई स्प्रिट में से थोड़ी चुराकर पी जाता था।"

दलितो का अधिकतर जीवन दूसरों की सेवा में ही गुजरता है। यह प्रथा वर्ण व्यवस्था के प्रारंभ से ही चली आ रही है और आज भी बरकरार है। दलित की तुलना हमेशा जानवरों के साथ की गयी है। इस बात का असर दलित जीवन पर गहराई से पड़ा है, गिरिराज किशोर इसी अमानवीयता के दृश्य को अपनी कहानी 'घोडे का नाम घोडा' प्रस्तुत करते है। जिसमें दलित स्वयं को जानवर (घोड़ा) ही समझने लगता है-

"हरमना तू समझता होगा नत्थू वहुत लालची और गंदा आदमी है। मैं खुद मानता हूँ। पर तू मुझे अपने जैसा समझ । वस फरक इतना ही है- मैं तेरी सेवा करता हूँ और तू मालिक की। मालिक का तेरे से सीधा काम पड़ता है, इसलिए वह तेरी मालिश कराता है। मेरे से नहीं पड़ता तो मुझे......तू देख ही रहा है। पर मेरी नसे तो मर चुकीं हैं तेरी अभी थोड़ी-थोड़ी फरकती है। वैसे हम तुम दोनों भाई-भाई।"

दलित सदैव अपनी प्रतिष्ठा व अधिकारों से वंचित रहा है। इसका मूल कारण हिंदु समाज की जाति व्यवस्था व गुलामी की संम्पूर्ण व्यवस्था है। उसका प्रभाव व्यक्ति के शरीर से लेकर आत्मातक और जन्म से लेकर मृत्यु तक पड़ा है। दलित आजीवन गुलामी व बदसलूकी की को सहता आ रहा है। भारतीय हिंदू समाज की जाति व्यवस्था रवर से अधिक लचीली और इस्पात से भी अधिक मजबूत है। इस संदर्भ में रमणिका गुप्ता लिखती है-

"वर्ण या जाति हिंदु समाज की पहचान है, वह हिंदु मानस की भी पहचान है। शूद्रो अतिशूद्रों स्त्रियों तथा आदिवासियों के प्रति घृणा और इन सबको गुलाम बनाए रखने की प्रवृत्ति उसकी स्थाई विशेषता है।"

'हो सकता है डेक तव भी जल रहा हो' कहानी में दलित जीवन की यातना, आर्थिक दुर्दशा, सामाजिक भेदभाव प्रस्तुत हुआ है। साथ ही ऐसी चुनैतियाँ है जिनका सामना करने का दृढ़ संकल्पन नहीं दिखाई देता। इसलिए शिक्षित दलितों में इन चुनौतियों से पैदा होने वाला आक्रोश और व्यग्रता को किसी भी तर्क में गलत नहीं ठहराया जा इस सकता। परंतु समाज की संवेदन शून्यता के विरूद्ध दलित आक्रोश की अभिव्यक्ति कहानी में होती है। कहानी का शिक्षित पात्र रामनिहोर राका अपने इन्टरव्यू के दरम्यान प्रश्न पूछने पर भी अपना आक्रोश नहीं छिपा पाता और उत्तर देता है-

"व्हाट इज राका? उसने हिंदी में ही जबाव दिया, सर पूर्णमासी..... लेकिन हम लोगों के लिए तो यह अमावास्या है, नाईट विद आउट मून। हाऊ....... काय .... वह एक मिनट के लिए झिझककर बोला, सर हमने तो चाँदनी देखी ही नहीं। सदियों से अमावस्था में जी रहे हैं।"

दलित समाज में एक शिक्षित वर्ग ऐसा भी है जो वर्ण व्यवस्था की क्रूर व अपमान जनक स्थितियाँ से वचने के लिए अपने आपको वचाता है, स्वयं को सवर्ण बताता है। गिरिराज किशोर की कहानी में 'हो सकता है डेक तब भी जल रहा हो' में इस तथ्य को उजागर किया गया है। कहानी में राका के साथ पढ़ने वाली विन्नी के

International Journal For Advanced Research In Science & Technology
A peer reviewed international journal www.ijarst.in
ISSN: 2457-0362

पिता स्वयं को सवर्ण मानते है। पर वे हैं नहीं। यह वात राका को तव पता चलती है, जब विन्नी के पिता का राका के साथ रहने पर विन्नी को फटकारते हैं। तव विन्नी गुस्से में आकर अपने पिता को जवाब देती है-

"पाप, राका मेरा सहपाठी है। ही इज आफ्टर ऑल माई फ्रेंड। आप जानते हैं लोग मुझे ठाकुर नहीं मानते...... पर शर्मा, शुक्ला, चौहान सव लड़के लड़किया मेरे दोस्त है। उनके पापाओं ने कभी नहीं कहा कि विन्नी के साथ मत रहो।"

"तुम्हारा मतलव ?"

"कुछ नहीं यह कि हम भी ठाकुर नहीं है....

राका भी सन्न रह गया था। बिन्नी के पिता अपने आपकों ठाकुर लिखते हैं, पर है वे वैकवर्ड हैं।"

दलित समाज का वह भाग जो अशिक्षित है अतिपिछड़ा है। वह आज भी यही समझता है कि दलित होना एक ईश्वरीय कोप है व उन्हें पूर्व जन्म की सता मिली है। जबकि ऐसा नहीं है। वर्ण व्यवस्था द्वारा बनाये गये समाज का परिणाम है। इस वर्ग पर हिंदु धर्म के संस्कार गहराई से घर कर चुके है वे मूर्तिपूजा, नामस्मरण, उपवास, आदि सभी के प्रति गहरी आस्था रखते हैं। समजा व विरादरी को धर्म की देन मानकर उसका अनुकरण मानते हैं। गिरिराज किशोर की कहानी 'रघुनाथ कृपा' में इस तथ्य को उजागर किया गया है। कहानी का पात्र रम्मे अर्थात् रामेश्वर बड़ी आस्था के साथ कहता है-

"कि यार इस देश की खूबी है कि देश चलता है। करने कराने की उसे चाह नहीं। इसे कहते है रघूनाथ कृपा । तुलसीदास महाराज ने जो रघुनाथ गुण गाया है, कोई मूरख तो थे नहीं..... कभी-कभी जब देश में पाप बढ़ता है तो वे अपने भक्तों से कहलवाते है- अजगर करे न चाकरी, पंछी करे न काम, दास मलुका कह गए, सबके दाता राम । ....। दास मलूका का कहना मानो अपने घर जाओ अपने कर्मों को रोओं, मुझे माफ करो। "

भारतयी समाज में दलित को मान-सम्मान व प्रतिष्ठा से सदैव वंचित रहना पड़ा है। परंतु सवर्ण दलितों से मान सम्मान की सदैव आकांक्षा करते रहे हैं। सवर्णों को लगता है कि पीढ़ी-दर-पीढी दलितों को सवणों का सम्मान करना चाहिए, उनकी गुलामी करनी चाहिए, उनके सारे गन्दे काम करने चाहिए। अगर इसका विरोध किया तो सबको अपमान सहना पड़ता है, गालियाँ सुननी पड़ती है गिरिराज किशोर अपनी कहानी 'मैं परशुराम नहीं' में भगवती गंदी टोकरी नहीं उठाना चाहती है तो उसे सवर्ण समाज व उसका ही परिवार अपमानित करता जबकि वह नयी नवेली दुल्हन है।

“जिजमानियाँ कहती है कि वहु तो सबके आती है पर चौधराइन काकी......अपनी बहू को पर्दे में छिपाकर रखे हैं कहीं हाथ लगे मैली न हो जाए।”